आचार्य श्री हरिभद्रसूरि और उनकी समरमयङ्का कहा

जो इच्छइ भवविरहं, भवविरहं को न बंधए सुयणो ।
समयसयसत्थकुसलो, समरमियङ्का कहा जस्स ॥

दाक्षिण्याङ्क आचार्य श्री उद्द्योतनसूरि महाराजने अपनी प्राकृत कुवलयमाला कथाके प्रारम्भिक प्रस्तावनाग्रंथमें अनेक प्राचीन मान्य आचार्य और उनकी कृतियोंका स्मरण किया है और इस प्रसंगमें उन्होंनें आचार्य श्री हरिभद्रसूरि, (जिनको, विरह अंक होनेसे विरहांक आचार्य माना जाता है) और उनकी समरमयङ्का कहाका भी स्मरण किया है। यही उल्लेख मैंने इस लेखके प्रारम्भमें दिया।

इस उल्लेखको देखते हुए पता चलता है कि आचार्य श्री हरिभद्रसूरि महाराजने समरमयङ्का कहा नामका कोई कथाग्रंथ बनाया था। आचार्य श्री हरिभद्रसूरिकी कृतिरूप प्राकृत कथाग्रन्थ समराइच्च कहा मिलता है, परन्तु समरमयङ्का कहा ग्रन्थ तो आज तक कहीं देखने या सुननेमें नहीं आया है। अतः यह ग्रन्थ वास्तवमें कौन ग्रन्थ है, इस विषयकी परीक्षा अतिलघु लेखमें करना है।

मुझे पूरा विश्वास हो गया है कि आचार्य श्री उद्द्योतनसूरिजीने समराइच्च कहाको ही समरमयङ्का कहा नामसे उल्लिखित किया है। प्रश्न यह उपस्थित होगा कि—समराइच्चकहा इस नाममें समर + आइच्च शब्द हैं तब समरमियंका नाममें समर + मियंका शब्द हैं। आइच्चका अर्थ सूर्य है तब मियंक–(सं. मृगाङ्क)का अर्थ प्रचलित परिभाषाके रूपमें चन्द्र होता है। अतः समराइच्च और समरमियंक ये दो नाम एकरूप कैसे हो सकते हैं? और इसी प्रकार समराइच्चकहा एवं समरमियंका कहा ये दो ग्रन्थ एक कैसे हो सकेंगे? इस विवादास्पद प्रश्नका उत्तर इस प्रकार है—

जैन प्रतिष्ठाविधिके ग्रन्थोंको देखनेसे पता चलता है कि एक जमानेमें चन्द्रकी तरह आदित्य–

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूर्यको भी शशांक, मृगांक आदि नामसे पहचानते थे। जैन प्रतिष्ठाविधान आदिके प्रसंगमें नव ग्रहोंका पूजन किया जाता है। इसमें नव ग्रहोंके नामसे अलग-अलग मन्त्रोच्चार होता है। इन मन्त्रोंमें सूर्यका मन्त्र आता है वह इस प्रकार है—

"ॐ ह्रीं शशाङ्कसूर्याय सहस्रकिरणाय नमो नमः स्वाहा।"

इस प्राचीनतम मन्त्रमें सूर्य या आदित्यको 'शशाङ्क' विशेषण दिया गया है। इससे पता चलता है कि एक जमानेमें चन्द्रकी तरह सूर्यको भी शशाङ्क, मृगाङ्क आदि नामसे पहचानते थे। अधिक सम्भव है कि इसी परिपाटीका अनुसरण करके ही आचार्य श्री उद्द्योतनसूरिने अपने कुवलय-माला कहा ग्रन्थकी प्रस्तावनामें समराइच्च कहा ग्रन्थको ही समरमयङ्का कहा नामसे उल्लिखित किया है।

इस प्रकार मुझे पूर्ण विश्वास है कि समराइच्च कहा और समरमयङ्का कहा ये दोनों एक ही ग्रन्थके नाम हैं।

['प्रेमी-अभिनंदन-ग्रंथ,' टीकमगढ, ई. स. १९४६]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org